COHERENCE – The Multidisciplinary Research Journal
Volume No: 16, Issue No: 2, Year: 2025 (July-December)
PP: 101-106
ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.85)
Journal Website www.coherencejournal.in

स्वतंत्रता-उत्तर बिहार में दलित चेतना का विस्तार और चुनावी राजनीति में दलितों की भागीदारी

सरोज कुमार यादव

विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

सार

स्वतंत्रता-उत्तर बिहार में दलित चेतना का विस्तार सामाजिक अपमान के प्रतिरोध, संवैधानिक अधिकारों, आरक्षण व्यवस्था, भूमि-संघर्ष, सामाजिक न्याय आंदोलन और चुनावी लोकतंत्र के व्यापक प्रसार से जुड़ा रहा है। बिहार में दलित राजनीति ने प्रारंभ में कांग्रेस-प्रधान प्रतिनिधित्व, जगजीवन राम जैसे राष्ट्रीय नेतृत्व और संवैधानिक संरक्षण के माध्यम से स्थान प्राप्त किया। बाद में समाजवादी राजनीति, वामपंथी किसान-मजदूर आंदोलनों, मंडल-उत्तर सामाजिक न्याय विमर्श, रामविलास पासवान की दलित-आधारित गठबंधन राजनीति तथा जीतन राम मांझी के महादलित विमर्श ने इसे बहुस्तरीय बनाया। यह शोध-पत्र द्वितीयक आँकड़ों के आधार पर स्वतंत्रता के बाद बिहार में दलित चेतना के विकास और चुनावी राजनीति में दलितों की भागीदारी का विश्लेषण करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि बिहार में अनुसूचित जाति समुदायों की संख्या-आधारित दावेदारी मजबूत हुई है, किंतु चुनावी प्रतिनिधित्व, शिक्षा, आर्थिक स्थिति और प्रशासनिक भागीदारी में अभी भी पर्याप्त अंतर है। 2023 के जाति-आधारित सर्वेक्षण में अनुसूचित जातियों की हिस्सेदारी 19.65% बताई गई, जबकि वर्तमान बिहार विधानसभा में अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित सीटें 38 हैं, जो कुल 243 सीटों का 15.64% है। इससे प्रतिनिधित्व और जनसंख्या के बीच अंतर दिखाई देता है। निष्कर्षतः बिहार में दलित राजनीति ने लोकतंत्र को सामाजिक आधार दिया है, परंतु वास्तविक सशक्तीकरण के लिए आर्थिक न्याय, शिक्षा, भूमि-अधिकार, स्थानीय नेतृत्व और दलित महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को अधिक मजबूत करना आवश्यक है।

मुख्य शब्द: दलित चेतना, बिहार, चुनावी राजनीति, सामाजिक न्याय, आरक्षण, जनभागीदारी, दलित नेतृत्व।

1. प्रस्तावना

स्वतंत्रता के बाद भारतीय लोकतंत्र ने औपचारिक रूप से सभी नागरिकों को समान राजनीतिक अधिकार दिए, किंतु बिहार जैसे गहरे जाति-आधारित ग्रामीण समाज में राजनीतिक समानता का सामाजिक अनुवाद क्रमिक और संघर्षपूर्ण रहा। दलित समुदायों के लिए मतदान का अधिकार केवल चुनावी प्रक्रिया में भागीदारी नहीं था, बल्कि सदियों से चले आ रहे सामाजिक बहिष्कार के विरुद्ध नागरिकता का सार्वजनिक दावा था। संविधान ने अस्पृश्यता-उन्मूलन, आरक्षण, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और विधिक संरक्षण का ढाँचा दिया, जिससे दलित चेतना को संस्थागत आधार मिला [1]।

बिहार में दलित चेतना का विस्तार स्वतंत्रता के बाद तीन प्रमुख दिशाओं में हुआ—पहली, संवैधानिक अधिकारों और आरक्षण के माध्यम से प्रतिनिधित्व; दूसरी, भूमि, मजदूरी और सामाजिक सम्मान से जुड़ा ग्रामीण संघर्ष; तीसरी, चुनावी गठबंधनों और जाति-आधारित राजनीतिक लामबंदी के माध्यम से सत्ता में भागीदारी। बिहार की राजनीति में दलितों की भूमिका को केवल आरक्षित सीटों से नहीं समझा जा सकता, क्योंकि दलित मतदाता कई बार सरकार-निर्माण में निर्णायक सामाजिक आधार के रूप में कार्य करते रहे हैं [2]।

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.85)
Journal Website www.coherencejournal.in

2. अध्ययन की पद्धति

यह शोध-पत्र द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसमें जनगणना 2011, बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण 2023, भारत निर्वाचन आयोग के सांख्यिकीय प्रतिवेदन, परिसीमन आदेश 2008, सामाजिक-आर्थिक जाति जनगणना और दलित राजनीति पर उपलब्ध विद्वत् अध्ययनों का उपयोग किया गया है। विश्लेषण में प्रतिशत, प्रतिनिधित्व-अंतर, प्रतिनिधित्व-सूचकांक और तुलनात्मक व्याख्या का प्रयोग किया गया है।

3. स्वतंत्रता-उत्तर काल में दलित चेतना की ऐतिहासिक दिशा

स्वतंत्रता के बाद बिहार में दलित राजनीति का प्रारंभिक चरण मुख्यतः कांग्रेस व्यवस्था के भीतर प्रतिनिधित्व से जुड़ा था। जगजीवन राम इस दौर के सबसे प्रभावशाली दलित नेता के रूप में उभरे। उन्होंने बिहार से निकलकर राष्ट्रीय राजनीति में दलित प्रतिनिधित्व को प्रशासनिक और संसदीय शक्ति से जोड़ा [3]। किंतु यह नेतृत्व व्यापक दलित आंदोलन के रूप में नहीं, बल्कि संस्थागत प्रतिनिधित्व के रूप में अधिक विकसित हुआ।

1960 और 1970 के दशक में बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि, मजदूरी और जातिगत हिंसा के प्रश्न तीखे हुए। दलित खेत-मजदूरों की स्थिति ने वामपंथी और समाजवादी राजनीति को आधार दिया। कई क्षेत्रों में दलित चेतना सामाजिक सम्मान से आगे बढ़कर वर्गीय शोषण और भूमि-संबंधी न्याय की माँग से जुड़ी। इस दौर में दलित राजनीति चुनावी मंच से अधिक ग्रामीण संघर्ष, मजदूरी, बटाईदारी और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित थी [4]।

1990 के बाद मंडल राजनीति ने बिहार में सामाजिक न्याय को चुनावी सत्ता का केंद्रीय प्रश्न बना दिया। पिछड़ा, अति-पिछड़ा, दलित और मुस्लिम समूहों की राजनीतिक लामबंदी ने ऊँची जातियों के लंबे प्रभुत्व को चुनौती दी। क्रिस्टोफ जेफ्रेलो ने उत्तर भारत में निम्न जातियों के राजनीतिक उभार को लोकतांत्रिक क्रांति की प्रक्रिया के रूप में देखा है [5]। बिहार में यह प्रक्रिया दलित समुदायों को राजनीतिक भाषा, सामाजिक पहचान और चुनावी सौदेबाजी की नई शक्ति देती है।

4. जनसंख्या और प्रतिनिधित्व का सांख्यिकीय आधार

2011 की जनगणना के अनुसार बिहार में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 16,567,325 थी, जो राज्य की कुल जनसंख्या का लगभग 15.91% थी [6]। 2023 के बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण में अनुसूचित जातियों की हिस्सेदारी 19.65% दर्ज की गई, जबकि अनुसूचित जनजातियों की हिस्सेदारी 1.68% बताई गई [7]। यह वृद्धि दलित समुदायों की चुनावी दावेदारी को मजबूत करती है।

तालिका 1: बिहार में अनुसूचित जाति जनसंख्या का तुलनात्मक स्वरूप

स्रोत	कुल जनसंख्या	अनुसूचित जाति जनसंख्या	अनुसूचित जाति प्रतिशत
जनगणना 2011	104,099,452	16,567,325	15.91%
जाति-आधारित सर्वेक्षण 2023	130,725,310	25,689,820	19.65%
अंतर	+26,625,858	+9,122,495	+3.74 प्रतिशतांक

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.85)
Journal Website www.coherencejournal.in

इस तालिका से स्पष्ट है कि 2011 से 2023 के बीच अनुसूचित जाति हिस्सेदारी में 3.74 प्रतिशतांक की वृद्धि दर्ज होती है। सापेक्ष रूप से यह लगभग 23.51% की वृद्धि को दिखाती है। चुनावी दृष्टि से यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि संख्या-आधारित दावेदारी बिहार की जाति-आधारित राजनीतिक संरचना में निर्णायक भूमिका निभाती है।

2008 के परिसीमन आदेश के बाद बिहार विधानसभा में कुल 243 सीटों में 38 सीटें अनुसूचित जातियों और 2 सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं [8]। भारत निर्वाचन आयोग के सांख्यिकीय प्रतिवेदन राज्य विधानसभा चुनावों के निर्वाचन-आधारित तथ्य उपलब्ध कराते हैं [9]।

तालिका 2: बिहार विधानसभा में अनुसूचित जाति प्रतिनिधित्व-सूचकांक

सूचक	आँकड़ा
कुल विधानसभा सीटें	243
अनुसूचित जाति आरक्षित सीटें	38
आरक्षित सीटों का प्रतिशत	15.64%
अनुसूचित जाति जनसंख्या, 2023	19.65%
प्रतिनिधित्व-अंतर	-4.01 प्रतिशतांक
प्रतिनिधित्व-सूचकांक	0.80

प्रतिनिधित्व-सूचकांक = 15.64 ÷ 19.65 = 0.80। इसका अर्थ है कि वर्तमान जनसंख्या हिस्सेदारी की तुलना में आरक्षित विधानसभाई प्रतिनिधित्व कम दिखाई देता है। यह अंतर परिसीमन के पुराने जनसंख्या-आधार और नए जाति-आधारित आँकड़ों के बीच उत्पन्न अंतर को दिखाता है।

5. चुनावी राजनीति में दलितों की भागीदारी

स्वतंत्रता-उत्तर बिहार में दलितों की चुनावी भागीदारी चार चरणों में समझी जा सकती है। पहला चरण 1950 और 1960 के दशक का था, जब दलित प्रतिनिधित्व कांग्रेस व्यवस्था के भीतर सीमित रूप से उपस्थित था। भारत निर्वाचन आयोग के 1951 बिहार विधानसभा चुनाव प्रतिवेदन में अनेक बहु-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों और आरक्षित प्रतिनिधित्व की प्रारंभिक संरचना दिखाई देती है [9]।

दूसरा चरण 1970 और 1980 के दशक का था, जब दलित चेतना सामाजिक संघर्षों, खेत-मजदूर आंदोलनों और जातिगत हिंसा के प्रतिरोध से जुड़ी। इस काल में दलित मतदाता केवल संरक्षणवादी राजनीति का हिस्सा नहीं रहे, बल्कि ग्रामीण सत्ता-संबंधों को चुनौती देने लगे [10]।

तीसरा चरण 1990 के बाद का है। मंडल राजनीति और सामाजिक न्याय आंदोलन ने दलितों को पिछड़ा-दलित-मुस्लिम गठबंधन की राजनीति में स्थान दिया। हालांकि नेतृत्व का केंद्र कई बार पिछड़ी जातियों के पास रहा, फिर भी दलित मतदाताओं की चुनावी महत्ता बढ़ी। इसी दौर में रामविलास पासवान ने लोक जनशक्ति पार्टी के माध्यम से दलितों, विशेषतः पासवान/दुसाध समुदाय, को राज्य और राष्ट्रीय गठबंधन राजनीति से जोड़ा [11]।

चौथा चरण समकालीन है, जिसमें दलित राजनीति उपजातीय, महादलित, महिला और युवा भागीदारी के अनेक स्तरों में दिखाई देती है। जीतन राम मांझी का नेतृत्व मुसहर तथा महादलित समुदायों की

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.85)
Journal Website www.coherencejournal.in

राजनीतिक दृश्यता से जुड़ा। समकालीन चुनावों में प्रमुख गठबंधन दलित, महादलित, अति-पिछड़ा और महिला मतदाताओं को अलग-अलग नीति-पैकेज, टिकट-वितरण और सामाजिक अभियांत्रिकी के माध्यम से संबोधित करते हैं [12]। हाल के चुनावी विमर्श में भी दलित और महादलित समुदायों को उम्मीदवार-चयन तथा सामाजिक समीकरण का महत्वपूर्ण आधार माना गया है।

6. दलित नेतृत्व का स्वरूप

बिहार में दलित नेतृत्व को तीन रूपों में देखा जा सकता है। पहला, संस्थागत-राष्ट्रीय नेतृत्व, जिसका प्रतीक जगजीवन राम रहे। दूसरा, गठबंधन-आधारित दलित नेतृत्व, जिसका प्रमुख उदाहरण रामविलास पासवान हैं। तीसरा, महादलित और अति-वंचित समूहों का नेतृत्व, जिसका उदाहरण जीतन राम मांझी हैं।

इन नेतृत्व-रूपों ने दलित राजनीति को अलग-अलग दिशा दी। जगजीवन राम ने प्रशासनिक दक्षता और राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व के माध्यम से दलित अस्मिता को सम्मान दिलाया। पासवान ने चुनावी गठबंधन, केंद्रीय सत्ता और दलित हितों को जोड़ने की रणनीति विकसित की। मांझी ने दलित राजनीति के भीतर सबसे वंचित समुदायों की उपस्थिति को केंद्र में रखा। यह विभाजन बताता है कि बिहार में दलित राजनीति एकसमान नहीं है, बल्कि उपजातीय अनुभवों, आर्थिक स्थिति और क्षेत्रीय आधार के अनुसार बदलती है [13]।

7. सामाजिक-आर्थिक स्थिति और दलित चेतना

बिहार में दलित चेतना का आर्थिक आधार अभी भी कमजोर है। बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण के सामाजिक-आर्थिक संकेतकों में अनुसूचित जाति परिवारों में गरीबी का अनुपात 42.93% बताया गया, जबकि राज्य औसत 34.13% था [7]। सरकारी नौकरी और उच्च शिक्षा में भी दलित समुदायों की हिस्सेदारी सीमित रही है। जाति-आधारित सर्वेक्षण से संबंधित प्रकाशित विवरण सरकारी रोजगार में अलग-अलग जातीय समूहों की उपस्थिति को दिखाते हैं, जिससे प्रतिनिधित्व और आर्थिक गतिशीलता के बीच अंतर स्पष्ट होता है।

तालिका 3: अनुसूचित जाति और राज्य औसत का सामाजिक-आर्थिक तुलनात्मक संकेत

सूचक	राज्य औसत	अनुसूचित जाति	अंतर
गरीब परिवार	34.13%	42.93%	+8.80
स्नातक शिक्षा	6.47%	3.12%	-3.35
सरकारी नौकरी	1.57%	1.13%	-0.44

इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि दलित चेतना केवल राजनीतिक पहचान का प्रश्न नहीं है। यह शिक्षा, रोजगार, गरीबी, भूमि और प्रशासनिक पहुँच से संबंधित व्यापक आर्थिक प्रश्न है। गरीबी की अधिकता चुनावी भागीदारी को कमजोर नहीं करती, बल्कि कई बार राजनीतिक निर्भरता को बढ़ाती है। इसलिए दलित मतदाता लोकतंत्र में सक्रिय होते हुए भी संसाधन-निर्णय में पूर्णतः स्वायत्त नहीं हो पाते।

8. दलित मतदाता, आरक्षित सीटें और राजनीतिक दल

बिहार में दलित मतदाता केवल अनुसूचित जाति आरक्षित सीटों तक सीमित राजनीतिक कारक नहीं हैं। वे सामान्य सीटों पर भी चुनावी परिणामों को प्रभावित करते हैं। कई निर्वाचन क्षेत्रों में दलित

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.85)
Journal Website www.coherencejournal.in

मतदाता निर्णायक संख्या में हैं, इसलिए राजनीतिक दल टिकट-वितरण, उम्मीदवार-चयन, सामाजिक गठबंधन और कल्याणकारी घोषणाओं में दलित समुदायों को ध्यान में रखते हैं।

आरक्षित सीटों का महत्व फिर भी केंद्रीय है, क्योंकि वे दलित प्रतिनिधियों को विधानमंडल में न्यूनतम उपस्थिति देती हैं। किंतु समस्या यह है कि आरक्षित सीटों पर चुने गए प्रतिनिधि कई बार दलित समाज की स्वतंत्र राजनीति के बजाय दल-रेखा और गठबंधन-नीति के भीतर सीमित रहते हैं। इससे प्रतिनिधित्व और वास्तविक आवाज के बीच अंतर उत्पन्न होता है [14]।

9. निष्कर्ष

स्वतंत्रता-उत्तर बिहार में दलित चेतना का विस्तार लोकतांत्रिक अधिकार, सामाजिक न्याय, ग्रामीण संघर्ष, आरक्षण और चुनावी भागीदारी के संयुक्त प्रभाव से हुआ है। प्रारंभिक चरण में दलित प्रतिनिधित्व कांग्रेस व्यवस्था और संवैधानिक आरक्षण से जुड़ा था। बाद में भूमि-संघर्ष, समाजवादी राजनीति, वाम प्रभाव और मंडल-उत्तर सामाजिक न्याय आंदोलन ने इसे व्यापक बनाया। रामविलास पासवान और जीतन राम मांझी जैसे नेताओं ने दलित राजनीति को गठबंधन-राजनीति, महादलित विमर्श और चुनावी दावेदारी से जोड़ा।

सांख्यिकीय विश्लेषण बताता है कि बिहार में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या हिस्सेदारी 2023 में 19.65% है, जबकि विधानसभा में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटें 15.64% हैं। यह प्रतिनिधित्व-अंतर भविष्य में परिसीमन और प्रतिनिधित्व-बहस को प्रभावित कर सकता है। सामाजिक-आर्थिक स्तर पर गरीबी, शिक्षा और सरकारी नौकरी में पिछड़ापन दलित राजनीति की प्रमुख सीमा है। अतः बिहार में दलित चेतना का अगला चरण केवल चुनावी लामबंदी नहीं, बल्कि आर्थिक न्याय, शिक्षा, रोजगार, भूमि-सुधार, पंचायत-स्तरीय नेतृत्व और दलित महिलाओं की प्रभावी भागीदारी पर आधारित होना चाहिए।

संदर्भ

1. भारत सरकार, *भारत का संविधान*. नई दिल्ली: विधि और न्याय मंत्रालय, अद्यतन संस्करण।
2. आर. कोठारी, *कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स*. नई दिल्ली: ओरिएंट लॉन्गमैन, 1970।
3. एस. कुमार, *चेंजिंग इलेक्ट्रोरल पॉलिटिक्स इन दिल्ली एंड बिहार*. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 2013।
4. एच. के. पटेल, "एस्पेक्ट्स ऑफ मोबिलाइजेशन्स ऑफ दलित्स इन बिहार, 1913–1952," *कंटेम्पररी वॉइस ऑफ दलित*, खंड 9, अंक 1, पृ. 63–72, 2017।
5. सी. जेफ्रेलो, *इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशन: द राइज ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया*. न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003।
6. भारत सरकार, *जनगणना 2011: अनुसूचित जाति जनसंख्या, बिहार*. नई दिल्ली: जनगणना आयुक्त कार्यालय, 2011।
7. बिहार सरकार, *बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण, 2023: जनसंख्या एवं सामाजिक-आर्थिक निष्कर्ष*. पटना: सामान्य प्रशासन विभाग, 2023।
8. भारत निर्वाचन आयोग, *डिलिमिटेशन ऑफ पार्लियामेंटरी एंड असेंबली कॉन्स्टिट्यूएंसीज ऑर्डर, 2008*. नई दिल्ली, 2008।
9. भारत निर्वाचन आयोग, *बिहार विधानसभा निर्वाचन सांख्यिकीय प्रतिवेदन, 1951–2020*. नई दिल्ली, विभिन्न वर्ष।

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.85)
Journal Website www.coherencejournal.in

10. ए. सिन्हा, *द रीजनल रूट्स ऑफ डेवलपमेंटल पॉलिटिक्स इन इंडिया: अ डिवाइडेड लेवायथन.* ब्लूमिंगटन: इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस, 2005।
11. एस. पाई, *दलित असर्शन एंड द अनफिनिश्ड डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन.* नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 2002।
12. जे. विटसो, *डेमोक्रेसी अगेंस्ट डेवलपमेंट: लोअर-कास्ट पॉलिटिक्स एंड पॉलिटिकल मॉडर्निटी इन पोस्टकोलोनियल इंडिया.* शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 2013।
13. जी. ओमवेट, *दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन.* नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 1994।
14. बी. आर. आंबेडकर, *जाति का विनाश.* नई दिल्ली: नवयान, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2014।

© Copyright @ Authors